

न थकी यात्रा

न थकी यात्रा

शमू विभाकर

सघी प्रकाशन

जयपुर

उदयपुर

प्रकाशक विजेन्द्र कुमार सघी
सघी प्रकाशन,
53 बापू बाजार,
उदयपुर-313001 (राज०)

मूल्य चालीस रुपये

सघी प्रकाशन जयपुर उदयपुर द्वारा प्रकाशित / प्रथम संस्करण 1989 /
सर्वाधिकार लेखनाधीन / शान्ति मुद्रणालय दिल्ली 110032 म मुद्रित ।

NA THAKI YATRA by Shambhoo Vibhaker Rs 40 00

पथ ही जिसका रहा गतव्य है

यह पवित्र शम्भू विभाकर की है जिनका जन्म 1939 में और निधन 1975 में हुआ। मृत्यु के समय उनकी आयु केवल जड़तीस वर्ष की थी। वरक्त-वेन्सर से पीड़ित थे।

युवा कवि शम्भू विभाकर बूंदी में जन्मे थे। किसी समय बूंदी काव्य और पांडित्य परम्परा के लिए इतना विख्यात था कि उसे 'छाटी काशी' कहा जाने लगा। शौर्य और स्वाभिमान की कविता करने वाले कवि सूर्यमल भीमण ने बूंदी का नाम अमर कर दिया। बाद में भी वहाँ की जमीन अनवरत नहीं हुई। आजादी के सघर्ष में बूंदी के निर्भीक पत्रकारों ने अंग्रेजी हुकूमत के जुल्मों के सामने घुटने नहीं टेके। लज्जाराम मेहता, ऋषिदत्त मेहता उन्हीं वृद्ध पत्रकारों के नाम थे। महाजनी सभ्यता के विरुद्ध नये तैवर की कविता लिखने वाले गोविन्द व्यास भी शम्भू विभाकर की तरह ही कम आयु में मरण पाए।

शम्भू विभाकर के साथ बूंदी की यह साहित्यिक-सांस्कृतिक परंपरा फिर से याद की जा सकती है और इसी के माध्यम से यह स्थापित करने का अवसर मिलता है कि किसी भी कवि के रचनात्मक के पीछे मनुष्य से एक अविच्छिन्न मानवीय इतिहास और परंपरा का आलोक फला होता है। यह बात दूसरी है कि किसी खास कवि में उसका प्रतिफल कैसा होता है?

यह कवि स्कूल में अथ शास्त्र के व्याख्याता थे। उनके रजिस्टर, डायरी में पता लगता है कि कविताओं के साथ व कहानियाँ भी लिखते थे। इन कहानियों के हार्मिये पर विभाकर स्त्रियों की सुंदर मुखाकृतियाँ बनाते रहे। इन स्त्रियों के वंश लम्बे और गहन हैं, वे तरुण होती हुई भी किशोरियाँ लगती हैं।

अपनी कविताओं में शम्भू विभाकर खाली रसान के कवि की तरह स्थापित होते हैं। उनकी रचनाओं में प्रकृति की एक मोहक दुनिया के बीच प्रेम के खिन कर देने वाले विपाद-युक्त आग्रह और कथन रहते हैं। यह बात दर्शन योग्य है कि विपाद के ये संदेश प्रकृति की सम्मोहक दुनिया से अलग नहीं होते इसलिए वे प्रेमियों की 'बरबाद और चौपट हुई दुनिया' के

घड़हर रही नगत । यदा नार-नार गंगा गंगा ? ति जो वार् भी धां म
 ता रहा है—इत उपजाती हुई रनिया क तितारा म या ति येनु गुजित
 अमरायो म अथवा ति इत रगीत मध्यात्रा क दरराजा का ठेना हुआ
 और यह कहता कि ' प्राण बल्लभ ' भूत ग जाता परदमी का '—यह वचन
 तात्कालिक प्रसंग है । अत म यह व्यक्ति मोट आने वाला म है ।

जमू विभाकर की नन रविता म का दुःखान्न धुमावदार और जटिल
 नहीं है । एक हल्की-मी भाषाशुद्धता क स्पष्ट और सहजता क कारण य
 रचनाएँ उनकी सबसे अच्छी और विश्वगीय टा गी हैं । उनम मनुष्य के प्रेम
 करन की उत्कट दृष्टि धार-धार अभिव्यक्त होनी है कि मी मी जमातरणा
 का सपना मायक हाता लगा है

सो सो जनम प्रतीक्षा कर लू
 प्रिय । मिलन का वचन भरो ता
 पलका-मलका शूल बुझाए
 असुवन साचू सीरम गलिया
 भवरो पर पहरे बिठला दू
 वही न जूठी कर दकनिया
 फूट पड़े पतझर स लाली
 तुम अदृणाय चरण धरो ता

युवा कविया की तरह विभाकर भी शब्दों की जादूई दुनिया बनाने म लगे
 रहत हैं । इन कविताआ मे ताजगी तो कम होनी है लेकिन रूपावृत्तियों का
 तिलस्म देखने लायक होता है ।

शोख चंचल नन से जब मारत तुम वान
 जिदगी जीना मुझे लगता तनिक आसान
 वक्ष पर हिलती उभरती बेणिया छविमान
 तब मचलती झील का होता भुझ है भान

विभाकर की ये रचनाएँ स्पष्ट और तामुक कोटि की नहीं हैं । इनकी छंद
 रचना दोष रहित हैं । इन कविताआ पर प्रसिद्ध कवि अचल की रमानी
 कविताओ का गहरा असर है ।

इस कवि की दूसरी विशेषता यह है कि रूपा के सार सम्मोहन क बाद
 भी वह अपनी खुरदरी, ऊबड़ खाबड़, शोक प्रस्त गरीब दुनिया से न तो दूर
 होता है और न बेपरवार । सुधाद्र दा ने एक गीत को प्रारम्भ करते हुए
 लिखा था ' कल्पना के पख पर बैठा हुआ मैं, पाव म जजीर है ससार की' ।

यह तथ्य रेखांकित करने योग्य है कि इस कवि न जितनी रचनाएँ प्रेम
 और सुन्दरता पर लिखी हैं उतनी ही रचनाएँ एक पस्त हिम्मत राष्ट्र का

नयी जिंदगी और हौसला देन के लिए भी लिखी हैं। इन रचनाओं का उत्साह प्रदर्शनकामी नहीं है बल्कि वचनबद्ध होने में है। कवि एक रचना में यह प्रण करता है

लाख विहसो तिमिर की शहजादियों मेरे चरण पर
 खना मजिल अबेले भोर पहले ढोक लूगा
 आ प्रिया की भाग निज सिदूर निशि भर पौछ रखना
 कल सुवह री भाल पर चिर चुवनी सिदूर दूगा
 चूडिया की खनक १ निशि भर तडपना मत मौन रहना
 लौटते ही ख मधुर भुज बधनी भरपूर दूगा
 आज तो सघप सागर कं भवर मे फस हसा हू
 मैं उपा के पूव साहिल को अरुण नव नूर दूगा
 साहसी मदिरा पिये य पैर यो बढते रहे तो
 आस गजगामी कुमारी विजय छिन मे मोह लूगा।

हम देखते हैं कि य कविताएँ बहुत उग्र शब्दों को काम में नहीं लेती पर वे मनुष्य के इरादों को मजबूत बनाने में मदद करती हैं।

विभाकर ने दिवाली पर बहुत सी रचनाएँ लिखी हैं और हर बार उन की यह कोशिश रही है कि ये बाहर का आलोक मनुष्य को अंदर की अंधेरी पतों तक चला जाए। ऐसा नहीं होता तो यह रोशनी की चमक-दमक उठ मरी हुई मछली की तरह लगती है। लिखा है

मानव की मानस कुटिया में, नयनों की सूनी बगिया में
 सपनों की रोगी दुनिया में, कितना घुप्प अंधेरा साथी १
 दीप शिखाओं के उत्सव का हृष्य मुझे नकली लगता है
 मानव कं उत्सव, त्याग म, प्रखर पसीने के पराग में
 शक्ति बर्फ म नहीं आग में यौतो सुख सवेरा साथी
 बिन बदले यह जगत् मुझे तो मरी हुई मछली लगता है।

एक बात यह भी है कि विभाकर न धर्मांध हैं न जडमति। अपनी कविताओं में वे बड़ी दुनिया बनाने की इच्छा व्यक्त करते हैं और अपन असाध्य राग कं बावजूद श्रम और साहस के गीत गाते हैं।

कुछ कविताओं में कवि ने पत के द्रुत-गति से पड़े जाने वाले छद्म को काम में लिया है।

कुछ कविताओं में प्रकृति के उपादानों को लेकर विभाकर ने जो कौशल (विशेषतया विशेषणों की उपयुक्तता) बताया है वह उनकी सभावनाओं को प्रकट करता है। 'पगडडियों' के अंतर्गत एक कविता है लू जिसे कवि ने 'अनुत्पीन बुचानिन, विरहिन, सौम्य गुदरी गृहा है।

इस कविता में कवि की कल्पना का एकदम नया उभय देखने को मिलता है। लिखा है—

तरुण आम्र के स्वध माथ पर प्रदन करती
 वृद्ध विटप के चरण धाम कर सिसनी भरती
 तप्त ताप क्षोली ल मादक ऐन्द्रजातिके
 यायावर पवमान सहचरी या गीता तुम ?

शभू विभाकर का मन में वृद्धी की बहुत-सा स्मृतियाँ हैं, वृद्धी के पतझर की, सूर्यमल मीसण की वृद्धी की नयनाभिराम प्रकृति की।

विभाकर की अक्षमय मृत्यु से राजस्थान का एक सभावनाशील कवि चला गया है, यह दुःख अवगणनीय है।

भवरजी शर्मा ने काशिश करके कहा-कहा त्रिखरी कविताओं को इकट्ठी की और वामुदेव चतुर्वेदी ने उन्हें छाटने तथा एकरूप देने में मदद दी इसलिए यह पुस्तक हाकर छप सकी है।

एक स्वगस्थ युवा कवि की पुस्तक संपादित करना और उसे पाठकों से मिलाना एक स्मृति काम है जिसे न करना अनुदारता होती।

आत्म सबोध

मर अनुज शभू 'विभाकर' साहित्यिक प्रतिभा के धनी थे। जि होने अनेक कविताए कहानिया एव सामयिक लेख लिखे। लेखन उनके जीवन का अभिन्न अंग था। जो कुछ लिखा वह उनकी डायरियो और नोट बुक तक ही सीमित रहा। मेरे हृदय मे बहुत समय से यह इच्छा थी कि उनका काव्य सक्लन प्रकाशित होकर सुधि पाठको क सम्मुख आ सके। यह मनोभावना इस प्रकाशन के साथ पूरी हो रही है।

उनका लेखन स्वात्त सुखाय था। अपनी मायताओ, धारणाओ और अपने चिन्तन के अनुसार ही वे अपने लेखन को ढालते रह। जब सारा जग सो रहा होता तब उनका कवित्व जाग रहा होता था।

पत, प्रसाद, निराला रामेश्वर शुक्ल 'अचल एव अज्ञेय से विशेष प्रभावित हुए ह। यही कारण है कि उनका प्रभाव इनकी कविताओ मे दिखाई देता है। श्री शभू 'विभाकर' का जीवन अनेक कठिनाइया के बावजूद भी सतत सघपशील रहा। समाज मे व्याप्त विकारा एव अन्याय के प्रति उनके मन मे पीडा थी उसकी अभिव्यक्ति उनकी कविताओ मे यत्र तत्र दिखाई देती है।

शभू विभाकर का जन्म 1939 मे हुआ और प्रारम्भिक शिक्षा बूदी, लाखेरी मे प्राप्त की। जीवन के अवसान के समय व राजकीय उच्च माध्यमिक विद्यालय बून्दी मे सन् 1975 मे कायरत थे। मृत्यु के दो वष पूव वे ब्रह्म-संसार के घातक रोग मे सघप करत रह। उनका उपचार जयपुर, इन्दौर और बम्बई मे हुआ। इस घातक रोग से ग्रहित रहत हुए भी उनका मनोबल बना रहा।

शभू 'विभाकर' ने राजकीय महाविद्यालय कोटा से एम ए (अधशास्त्र) किया एव महेश शिक्षक प्रशिक्षण महाविद्यालय जोधपुर से पी एच की परीक्षा उत्तीर्ण की। अधशास्त्र के व्याख्याता के रूप मे विभिन्न विद्यालयो मे काय किया किन्तु साहित्य के प्रति अनुराग एव श्रुताव बराबर बना रहा।

यह प्रकाशन मेर भाजे राजेश एव भतीजी प्रतिभा (सुपुत्र सुपुत्री शम्भू विभाकर) के बिना असभव था जिसने यत्न-तन विखरी नष्ट प्राय हाती गाम्भी का छाजन का प्रयास किया उनकी डायरिया एव नोट बुक्स उपलब्ध कराने म उनकी भूमिका महत्वपूर्ण रही है ।

इस काय सकलन का यह परिष्कृत रूप देने का श्रेय मेरे मित्र एव गुरु आन्तरणीय श्री नद चतुर्वेदी को है जिहोंने अद्यत परिश्रम से इसे सम्पादित किया । उन्होंने श्री विभाकर क कवि कम म पँठ कर भूमिना लखन द्वारा अपना योगदान दिया । श्री वासुदेव चतुर्वेदी ने बड परिश्रम पूवक इस सप्तत काय म मरा सहयोग दिया एव इय वष्ट साध्य काय को मूत रूप दन म अग्रणी भूमिका निभाई । श्री विजेन्द्र सधी, सधी प्रकाशन ने इस पुस्तक क प्रकाशन म अपने स्नेह एव सौजन्यता का परिचय दिया-तदय उनके प्रति आभार ।

ऐसा मेरा विश्वास है कि प्रस्तुत सकलन पाठका को रुचिकर लगेगा । यदि य कविताएँ और गीत जापको रुचिकर लग पाये तो सकलन सम्पादन की सायकता इसी म मानूंगा ।

निम्शक, राजस्थान राज्य शक्तिर
अनुसंधान एव प्रशिक्षण सम्यान उज्जयपुर

— भवरत्नाल शर्मा

अनुक्रमाणिका

आकाश

13-41

मफर 15 / साध्यदीप 16 / मनुहार 17 / विदा के क्षणों पर 19 / वीत-पलो को प्रणाम 20 / सघप या विपपान 22 / आ न सकूंगा 23 / फिर याद तुम्हारी आई 24 / आखें 25 / भूल जाना 26 / गीत 27 / गीत 28 / साझ और तुम 30 / यह कैसे कहूँ मैं 32 / बोन मन की रामिनी 33 / मगर प्राण ! आये न तुम 34 / प्राण ! न आना पास 35 / किनरी मधुरितु और आत्म पीडन 36 / फिर सावन घिरा है 38 / कौन वह 40 ।

धरती

43-73

प्रण 45 / श्रम की सदा विजय होगी 47 / एक निराशा, एक आशा 48 / शत श्रम के द्वीप जलाओ हे ! 49 / अभाव का आलोक 50 / नई ज्योति का गीत 51 / शत शत स्वागत पुण्य दिवस हे ! 52 / गणराज्य से 53 / दीपोत्सव की आग 55 / जागता चल मेरे देश 56 / गीत 57 / पुकार 58 / मैं न धम का दास हूँ 59 / प्रजातन की वपगाठ पर 60 / विकास का एक निवेदन 61 / ज्योति का उत्सव मनाना व्यथ है 62 / कौन शत्रु 63 / दीपोत्सव 65 / भूमिका 66 / भारतीय जनता के नाम हि दी की पाती 67 / क्रांति अमर है 69 / विद्रोह का झंडा उठाओ 71 / उजला और प्रभात करो 72

पगडंडिया

75 104

वूदी का पतझर 77 / जेठ की दुपहर 78 / लू के प्रति 80 / रात 81 / प्रात 83 / गाँव का गीत 85 / वायु से 86 / चतुष्पदिया 87 / चादनी धरती है 89 / गीत 90 / गीत 91 / कीलें 92 / ए ! मन की प्यासी श्वास 94 / प्यार का भवन 97 / रात 98 / एम० आई० रोड की एक शाम 99 / जवाहरलाल की मृत्यु पर 100 / विधवा 101 / आदमी देवता है 102 / कविराजा सूर्यमल्ल क प्रति 103 ।

आकाश

सफर

सरल धूलि-काटे सखा है सदा स
डगर का सफर तो प्रणय सा विमल है ।

चरण ताड देगे अचल राह क सब
समुन्दर सडक खुद अरे नव बनेगा,
किरण चाद की रास निशि भर करेगी
पवन प्राण म आस नूतन भरेगा ।
अगर मेघमाला धिरी भी गगन पर
मगन पाव ता भी कि जागे बढेगा ।

निपुण पाप, वज्ञा करेगा प्रणय ही ।
अधर चूमते सा सपन पथ जमल है

साध्य दीप

तुलसी चोरे दीप धरा सध्या जब उतरी ।
 हुए बहुत दिन
 बहे वष छिन
 कि तु न प्रियतम
 घर को आये ।
 क्रुद्ध याद बरसात प्राण की टूटी छतरी ।
 दुखती छाती
 मिली न पाती
 नीद न कैसे
 सपने आये ।
 दूज इट्टु की रई गात की डाले मथरी ।
 आज दुपहरी
 नीम कुवारी
 बोला कागा
 सकुन आये ।
 माजे वरतन तडपन गगरी हुई न सुथरी ।
 मुए पवन ने
 पिक की स्वन न
 नय दद क
 अकुर धोय ।
 अघर मरुस्थल प्यास दूर तक कही न बदरी ।

बिखरे कुतल
 घायल अचल
 ढर-ढर नयना
 ढर पथराय ।

बजरा डसता
 गजरा जलता
 बाग आम्रनव
 लो थौराय ।

गोबर धापा
 धर पथ नापा
 चूल्हे ऊपर
 चावल रोये ।

कब तक काटू
 किमकी वाटू
 चिर विरही पल
 पीडा धोये ।

मनुहार

ये पावस के मास जामुनी मानस से
और प्राणप्रिय ! तुम रूठे परदेश चले ।

यह मौसम है नूतन फसल बुवाई का
यह मुहूर्त है गदरी बाह सगाई का
छक कर पी है खूब मरुस्थल प्यासे ने
यह मौका है बदरी की अंगड़ाई का
बूदी की शहनाई का ।

इन्द्रधनुष का सत्तरगी गलहार पहिन
शील चूमते तरुण छितिज ने रग छले

यह स्वर जागा पिक की छेड छकाई का
आकुल पानी नदिया की तरुणाई का
लजी हवा के खनखन कगन खनक उठे
बजा बाँसुरी रहा मोर अमराई का
छज्जे पीपल खाई का

इतरा कण-कण ज्वाल आढ हरियाली की
निठुर दीप पर शलभ प्राण सौ बार बले

झूमा बचपन भूला पाठ पढाई का
खिला बुढापा उमरा काल ढिठाई का
शोख मुवापन को क्या विरहा देते हो ?
जब कि यही तो मौसम नजर जुडाई का
गुपचुप शोर मचाई का

छछोता की अगता म ज्या नार सजी,
घपरला पर रष्ट पगर गले मिने

जीवन सारा कीच भरे वरणाई का
मान अर पिय टल ले शाप विदाई का
सपनो की नन्दन श्री महकी हुलस उठे
और और फिर पा ले कोप खुदाई का,
दशन घम वमाई का

तुम नयना स दूर उघर कुछ दर हुए
इघर प्राण का मूरज मूच्छा अचल डल ।

विदा के क्षणों पर

मुझे पता था नहीं स्नेह यह क्या होता है
 किन्तु आज जब माग रहे तुम विदा मौन हा
 आखों में है मेघ प्राण में जमिट तपन है ।
 मन के खोल किवार अपरिचित देहरी ऊपर
 तुमने दी आवाज दौड़ कर मैं आया था ।
 कौन दिशा का पवन चला था अमर सुवासित
 जो भावस में सुधासिक्त पूनम लाया था ।
 लजा रही थी कड़ी धूप में नई जुलाई
 और आम्र वन छाह सलोन विहग छिपे थे
 फिर अधरो पर धरी कि तुमने हास बासुरी
 सुधि के गोकुल किस गोपी के पाव कपे थे ।
 किन्तु आज अब सुलग रही सपना की भट्टी
 यह विछुड़न का शब्द घटा क्या निठुर ईश ने
 लय में लावा ऊष्ण, कठ में तीव्र जलन है ।

कौन पथ में कौन डगर में कहा मिलो ?
 कौन नगर, गढ़, कौन ग्राम अधिवास करोगे ?
 कसक छोड़कर जाने वाले ओ निर्मोही ।
 भूतोगे तुम मुझे या कि विश्वास करोगे ?
 बीत चुके हैं दिवस मिलन के पुलक विमुग्धत
 ये विपाद के बजे शखवर महापीथ स
 यह विमुक्ति का क्षण आया है आंसू लेकर
 और लुटा लो शलभ स्वयं चुप दीपशिखा र

याद तुम्हारी इ द्रधनुष सी पूज्य रहेगी
 भोर छलेगा नित्य कि बरिन रन दहेगी
 सोच-सोच कर डर का पापी चमन दफन है ।

बीते फलो का प्रणाम

अगर आज वे पल पुन खिल उठे तो
निठुर मौत की आधियाँ गुनगुना दें ।

कभी तो नयनवा नयन जाम पीकर
निराली अदा से तनिक डगमगाए
कभी केश तरुवर तले दिन बिताए
अधर चंद्रमा म अधर नित नहाए
कभी ये स्वरो ने कि चूने गगन पर
लचकती कमर मे उभरत उरा म
मृदुलता कि इतनी जरा मुड पडे तो
गगन झिडकिया ॐ घराकुछ सुना दे
न जाने अमिय या कि था वह हलाहल

लबालब नयन की भरी प्यालिया थी ।
श्रवण पग सुगुजित नई बालियाँ थी
जिह लख हवा की बजी तालियाँ थी
अपरचित जगत था अपरचित फलाफल ।
सुपरचित दगा व सरस देवता स
यही एक इच्छा हृदयगत तपन की
नयन स नयन की कि बलिया सुना दे
अमुखरित मयूरी भले कठ की भी

सपन पिक विचरता बसती विपिन म
गयी दूब गगरी व्यथा के पुलिन म
जल चंद्र तिनकर अमावस गगन म
स्पदन की दुल्लिन स्वय म लजी थी ।

मगर विष भरी क्रूर झंझा घिरी फिर
हुई कल्पना बाझपन से विभूषित
समय ने कहा व्यग सीना तना दे
कि जमी अगिन कौन सी आत्मदेही
फफव कर मिला मैं लिपट मरघटा से
भटक भाल फोडा सबल पटपटा से
कि लौटा विकल ही अमल पनघटा से
कि तडकी चिता पर नयन याद न ही
खडा आ हुआ वक्ष पर जड हिमालय
किसी ने शिरा हर कि वारुद भर दी
कि शोला छुआ दो स्वय को उडा द ।

सघप या विपपान

होठ पर खिलनी तुम्हारे जब सलज मुसकान
भीगता तन भीगता मन, भीग रहते प्राण

शोख चचन नन से जब मारत तुम वान
जिदगी जीना मुझे लगता तनिक आसान
वक्ष पर हिलती उभरती वेणिया छबिमान
तब मचलती क्षील का होता मुझे है भान

गल चलते उलझ पडती झाडिया नादान
बाग सं लगती तुम्हारी जम की पहिचान
पथ च नत लचक जाती कमरिया नादान
ज्या हवा म डोलती हो फिर लता अनजान

रूप का यह सिंधु ! छवि की खान यह रसवान
प्यार की तलवार पर शुभशील की यह म्यान
आह ! अपने दायरा का है मुच सब ज्ञान
मैं वरू किसको प्रिय । सघप या विपपान ।

आ न सकूगा

इस होली पर आ न सकूगा प्राण वल्लभे !

रूठ न जाना अपन पागल परदेशी स ।

अपनी सखियाँ सग

उठाना घन गुलाल के

रगो की धारिश मे झूमे

खेत गाल के

उछल सुटाना फूल

कि कोमल अधर डाल के

रगा की महफिल मे इतना डूब न जाना

नेह निभाना भूल कि जाओ परदेशी स

है प्यार अमल की बूद

या कि विष निशर हैं

यह प्राण ! हमारे

सम्बन्धो पर निभर है

मैं सोच न सक्ता

हम दोना म अतर है

और लिखू क्या स्वय समझना मन की भाषा

सचमुच तुम बिन रहा न जाए परदसी स ।

आँखें

अँगारो सी दहक रही है रातो जागी आँखें
बार बार ये किस याद कर भर-भर आई आँखें ।
रही दूडती सूनेपन मे उसको जलती आँखें
मुझसे जिसकी एक घडी मे लडी बडी दो आँखें
वही समय की सरित, तटो पर रही रेत सी आँखें
तपी जून आकठ दिसम्बर अह रह पथरी आँखें
चुप चुप है वातास गगन भू-लता सुमन की आँखें
उलझी साडी जहा छुडा कर समुद्र तरेरी आँखें
छक छक छवि मधु धार पान कर मुदी खुमारी आँखें
बीत गया वह निमित्त याद कर ढरकी मोती आँखें ।
किन्तु हृदय मे गडे फास सी नित्य वही दा आँखें
लावा भरती ऊष्ण रक्त म लजे कमल सी आँखें
और मुझे कुछ नही सूझता सिवा सिफ दो आँखें
मम सलाखें छुला कहा तो आह फोड लू आँखें
अतस की आँखो से लेकिन नित्य दिखेगी आँखें
रोम रोम म पुन बगावत भर भर देगी आँखें
सत्य मृत्यु के बाद न पीछा छाडेगी व आँखें
ज म मरण का आजे काजर वही नशीली आँखें
दो एसी आशीष दवता ! खुले अवधि की आँखें
हो जाए फिर चार कि भटकी-भटकी य दा आँखें

फिर याद तुम्हारी आई

यह शाम तुम्हारी बेश राशि आवाज सी
यह शाम तुम्हारी चितवन बाजर धारा सी
यह शाम तुम्हारी परछाई मधु धारा सी
यह शाम तुम्हारे गाल उगे तिल तारा सी
यह शाम तुम्हारे गाल रोम की कारा सी
गहन उदासी तन कचोटती तहाई

फिर याद तुम्हारी आई

यह हवा गध म डूबे आबुल अचल सी
खग नाद शरारत भगी चाल पग चचल सी
ढलती धूप तुम्हारा आना लजे कमल सी
दमकी झील अघर का रखा शिनमिल सी
और माझ का विम्ब कि बिदिया भाल विमन सी
है क्षुब्ध धरा भी देख व्योम को निठुराई

ना याद तुम्हारी आई

मुझमे प्यास अवाधिन फैंते दूर क्षितिज भी
तीखी तपन जून म झुलमी मरुथल रज सी
कमकी तडप बिजुरिया चीर उगे नीरज सी
है वह लगन पिनी की अमर गुहार गरज सी
और प्राण म पीर ज्वाल के बहके ध्वज सी
मैं ढा न सकूंगा बिना तुम्हार तरफाई

क्या याद तुम्हारी आई ।

आँखें

अँगारो सी दहक रही है रातो जागी आखें
बार बार ये किसे याद कर भर-भर आई आखें ।
रही दूढती सूनेपन मे उसको जलती आखें
मुझसे जिसकी एक घडी म लडी बडी दो आखें
वही समय की सरित, तटो पर रही रेत सी आखें
तपी जून आकठ दिसम्बर अह रह पथरी आखें
चुप चुप है वातास गगन भू लता सुमन की आखें
उलझी साडी जहा छुडा कर समुद्र तरेरी आखें
छक छक छवि मधु धार पान कर मुदी खुमारी आखें
भीत गया वह निमित्त याद कर ढरकी माती जाखे ।
किन्तु हृदय मे गडे फास सी नित्य वही दो आखें
लावा भरती ऊष्ण रक्त मे लजे कमल सी आखें
और मुझे कुछ नही सूझता सिवा सिफ दो आखें
मम सलाखें छुला कहा तो आह फोड लू आखें
अतस की आखो से लेकिन नित्य दिखेंगी आखें
रोम रोम मे पुन बगावत भर भर देगी आखें
सत्य मत्यु के बाद न पीछा छाडेगी व आखें
जन्म मरण का आजै काजर वही नशीनी आखें
दो ऐसी आशीष देवता ! खुले अवधि की आखें
हो जाए फिर चार कि भटकी भटकी य दो आखें

भूल जाना

अब न आऊगा तुम्हारे गाँव, गोरी ।

हो सके तो मानिनी ! बस भूल जाना ।

चादनी का था करिश्मा या कि कोई
शाप के बश हो गया था मोह विह्वल
दूरियों व खूब गहरे सागरा को पार करके
पास कैस आ गया था । हाय ! उस पल ।
क्या बताऊँ आग थी बस आग थी बस,
जो कि मुझको कर गई थी लील, चचल ।

किंतु अब सभय पथ से लौट पडना,

है नहीं मुमकिन, मुझे बस भूल जाना ।

जुल्फ के बादल नहीं हैं सत्य—बेबल,
सत्य भी है भूख से दिन रात लडना ।
गाल तिल को चूम लेना सच न बेबल
मत्य है गम की चिंता व विह्वल जलना ।
दद बकारी, गरीबी आसुआ स
सत्य ही है रूपसी ! नित युद्ध करना ।

है तुम्हें प्यारे अमिय के शुभ्र प्याले

है मुझे प्रियतम हलाहल भूल जाना ।

जुल्म के पाखंड के ऊंचे महल को,
तुम सुनागी एक दिन, मैं गिराया ।
अस्त करना है मुझे जन व जिन्होंने
विश्व भर म झूठ का डका बजाया
चोख उठोगी मलोनी ! जब सुनोगी—
एक बिरही व कि वतन के काम आया ।

याद-सर की, आ कमलिनि । भूल जाना,

हृष नभ की चद्रिक । बस भूल जाना ।

गीत

एक असें से हमारी आख या मिलती रही है
किंतु अधरो पर कटीले शीत की चट्टान दब है
नील अलको की नशीली घाटिया स मन सुलाया
विरल वसन्तो की वसन्ती सुरभियो मे मन लुभाया
कल्पना के कुज म छिप छिप मिला हूँ नित्य ही में
पर कभी दो बोन बोलो तुम शुभे ! वह क्षण न आया
यदि पुजारी ने स्वय की भेंट भी दी अचना म
देव क्या वरदान द जो, रे स्वय ही भूक जड है
स्वग की शुचि कामना सा ली तुम्हारे दरस पाकर
अश्रु बिहस प्राण शर म स्निग्ध तप दग परस पाकर
रूप का खग चेतना को चोच म ल मग्न बठा
स्नेह लतिका सुगदुगाई राम मन म हुलस छाकर
उग्र लहरो के भयकर ज्वार मे डूबा तिरा म
पर अतल को चूमने स रोकती वह क्या पकड है ?
आह ! ओरो स प्रमुद हँम इस तरह बाल कि तुम प्रिय
किरण मुख म निज अधर द जिम तरह वाले कुसुम प्रिय ।
चद्रिका तुम ओ ! हजारों याजनो तक बिखर छिटकी ।
मैं बहिष्कृत वह कुआ हूँ दूर तक जिसम कि तम प्रिय
मन सुपरिचित दग सुपरिचित किन्तु तनवा है अपरिचित ।
इंद्र धनु वह लहरिया जिसमे मचलती बन अकड है
चार दिन हैं शेष फिर तो यह नयन व्यापार भी प्रिय
झर पड़ेगा जोर तरा मदभरा शृंगार भी प्रिय
भूल फिर मुझको न जाने कौन मग म तुम बढोगी ।
धूल हँस देगे चरण पर मरण पर अगार भी प्रिय
जिंदगी का हृप का त्यौहार समझो ना कुमारी
मह भटकती इक लहर तिरती कभी खाती रगड है !

गीत

सौ सौ जनम प्रतीक्षा कर लूं
प्रिय मिलने का वचन भरो तो

पलका पलको शूल बुहारूँ
असुवन सीचूं सौरभ गलियाँ
भवरो पर पहरे बिठला दू
कही न जूठी कर दे कलियाँ

फूट पड़े पतझर से लाली
तुम अरुणाये चरण धरो तो

लट बिखराये जोग रमाये
प्रीत कुमारी तुम्हे बुलाये
बरन पीडा तुम बिन मन म
बिना धुएँ का हवन कराये

सास साम फिर रास रचा ले
वन धनश्याम उमड बिखरो तो

रात न मेरी दूध नहाई
प्रात न मरा फूलो वाला
तार तार हो गया निमोही
सध्या का रगीन दुशाला

जीवन सिंदूरी हो जाय
तुम चितवन की किरण करो तो ।

सूरज को अधरी पर भर लू
काजल पर डालूँ अँधियारी
युग युग के पल छिन गिन गिन कर
वाट निहारूँ प्राण तुम्हारी

सासो को जजीर बना लू
तुम प्राणो का वरण करो तो ।

माँझ और तुम

बुतलो की नील निधिया को समेटे
क्या स्वय तुम साय बन कर छा गई ।

श्वेत, श्यामल अरुण नीलम बादला न
व्योम आगन म रची नवचित्र शाला
क्षितिज के उस पार दिन का भानु साधू
जा रहा है ओढे गरिक मा दुशाला
नीम पीपल खेजड की ममराहट
धम रही ओ दुल रहा नव राग प्याला

शुभ्र विहसन को बिखेरे भूमि नभ म
क्या स्वय तुम चादनी बन आ गई ।

और हसमुख तारको की कोटि आँखें
डूडती है किस अपरिचित बालिका को
भग्न उर की क्षीण आतुर क्षुब्ध लहरें
टेरती है किस हृदय की बालिका को
और थपकी दे मुला कर निखिल जग को
दे रहा है वायु ऋण किस मालिका को

सुरभि आचल की लिय चिर ज्ञात निरूपम
क्यो स्वय तुम परिमलो मे छा गई ।

बोल मरे प्राण कब तक मरण-भीडा
का निठुर उपहार मैं सहता रहूँगा
बोल मन के ध्यान कब तक मैं अवेला,
यू सिसक कर
की दहगा

वक्ष कुजो मे निराला दद-अबु
उगा, शायद तुम स्वय ही आ गई !

किंतु मानी प्राण ! लगता है मुझे या
रात, प्रात , वात, घातो म तुम्ही हो
दद तेरा, आह की यह गद तरी
नदी, निझर, उदधि साता मे तुम्ही हो
तडप मरी दह नटखट बोल उठती—
आह, क्या तुम रोम, प्राणा म नही हो ?

लाध कर तन-दूरिया, मजदूरिया—सब,
क्या स्वय तुम आज मन तक आ गई !

यह कैसे कहूँ मैं

क्यों न आया हूँ तुम्हारे पास यह कैसे कहूँ मैं ।
गमक उठा यह हृदय का बाग पावर तब निमंत्रण,
लौट आए ज्यो अचाक उम्र के रंगीन मधु क्षण,
प्यास—आबुल दाह मेरी बन गयी थी स्निग्ध चल्न ।
नैन म था मेघ का आभास, यह कैसे कहूँ मैं ।

आस के वातास म सपन उडे थे सित मुनहसे,
ओ' प्रणय आराधना से प्यार जागा मद होले,
याद आई उस कली की जो खिली थी घप पहले ।
घडकन करने लगी थी रास यह कैसे कहूँ मैं ।

किन्तु सहसा आंधिया के देश की पुरवा बही वह
पाँव मुरदा हो गये ओ सपन शर म भी गय बह
इस तरह सब होसते डूबे न जाने किस अतल मे ।
राह म मुस्का रहा था नाश, यह कैसे कहूँ मैं ।

हृदय कापा प्राण रोये हो रहा हर राम म रव,
आग तन मे आग मन म, जल रहा हर आर स भव,
फडफडाया ब्योम तडपा चाद धरती बन गयी शव ।
तिमिर का फिर हो गया मैं दास, यह कैसे कहूँ मैं ।
क्यों न आया हूँ तुम्हारे पास, यह कैसे कहूँ मैं ।

बोल मन की रागिनी

बोल मन की रागिनी तू बाल,
गान में शत भेद मन के खोल ।

नमित नीलम आख में सावन लिए हूँ,
विगत सुख की याद का ईंधन लिए हूँ
वेदना का प्राण में पाहुन लिए हूँ ।

कौन सपना का सरस धुन बोल
राह को या कर रहा है लोल ।

बादलो के गाल पर ठिठकी नमी है,
जाग सारी रात यह, रोयी ज़मी है
सरित मन की वेदना कब रे थमी है ।

कौन पीडा ले सकेगा मोल ?
पात पतझर में सके कव डोल ?

आगमन की आस में दिल को दहा है,
गरल पी कर द्वेष काटो का सहा है
विवश में अनजान मम मजिल कहा है ।

दद जीवन में सके कव धोल—
हार का आभास ही अनमोल ।

मगर प्राण ! आये न तुम !

व्योम के मध्य म मघ भी नव घुमड,
घरघराये मगर प्राण ! आय न तुम !

मेघ गिमक्षिम बरस कर विसी खेत म,
भूक हरत धरा की जलन बावरी,
एक मर मगर प्राण के खत म,
प्यास राती सिसक चुप पडी बासुरी,
नन के अश्व भी मघ रु होड कर,
दीन दुलते सिहर कँद ते गाधुरी !

ओड कर गात पर रेशमी ओढनी

भूमि इठना रही—प्राण ! आय न तुम !

ओ निठुर भीत मेरे ! तुम्हारे बिना
माद का दीप यह रोशनी हीन है !
निक्षरो म, सरो म सलिल झूलता
तडफडाय मचल नैन के मीन है !
द्रुद्र धनुषी वसन ओढकर नव दिशा
श्वास की बीन यह दीन है क्षीण है !

विद्युतो के दिये स विभ्रूपित गगन,

भूमि नवयौवना—प्राण ! आये न तुम !

दूर तक सज रहे राह के केश ये
अजनबी वश म वायु गतिमान है !
बूद की थाप पर प्रीत क दश का
ढोल शरमा बजा मेघ छविमान है !
कि-तु मेरे नपन म कि जीवन नही
माँस के शव विमल गात शमशान है

भोर भी गौँस भी दिवस औ ' यामिनी

में कि रो रा यका प्राण ! आये न तुम !

प्राण ! न आना पास

प्राण ! न आना पास, पवन बन मैं ही द्वार चला आऊँगा !

ऊषा के मोहन तीरो स तन की खोल श्रुधला झनझन,
मन की डाल बैठकर काबिल बिखरा द भू पर नवयौवन,
शबनम को माधुय दान दे गगन हर जब जग की कसकन—
विकल न होना और नैन के जगा न लेना नीर भर घन !

प्राण ! न खोना आस सपन बन मैं ही पार चला जाऊँगा !

प्राण ! न आना पास, पवन बन मैं ही द्वार चला आऊँगा !

धीरज की सुनसान राह से बुला न लेना याद-बटोही
चुभन चित्त की अगवानी म भेज न देना उर निर्मोही
ध्रमरी के मधु अधर परस पा खिले शरम जब कली बिछोही—
तुम न ऋण उछवास छोडना ओ मेरे प्रिय, मीत, सनेही !

प्राण ! न खोना हाम, बयन बन पिक का तार चुरा लाऊँगा !

प्राण ! न आना पास, पवन बन मैं ही द्वार चला आऊँगा !

दिवसो के छलिया सता को मोती की मधु भीख न देना,
रातो की पगली बिजुरी से जलना-बुझना सीख न लेना
व्यगो की निमम आधी मे तट तक तुम नैया मत खेना,
तिल तिल जल कर शरद व्योम स माग नखत की अगिन न लेना !

प्राण ! न पूजो नाश, तपन बन छल-समार जला आऊँगा !

प्राण ! न आना पास, पवन बन मैं ही द्वार चला आऊँगा !

किन्नरी मधु रितु और आत्म पीडन

उपवन अतीत लहराता
यादा के सुमन विहसत
उन पुन्य मिलन घडिया में
सज्जा के दीपक जलत

मन प्रणय सिंधु घहराता
भावो की नौका तिरती
के दुख की कड़ी बगारे
करती विलाप जा घसती

उन सौरभ मय रातो में
हिमकर का दीया जलता
जड शलभ बने तारा का
जलता मन हिया पिघलाता

जब मलय लहर जाती थी
वासती धूमट खोले
मुकुलित हो मेरा काकिल
दो गीत प्रणय के बोले

य तारक दल दिगमण्डल
यात ये गीत नशीले
तब श्वास किन्नरी चक्कर
बहती थी धाडा पी ले

तारो का नह टपकता
भावा क छन्द विहसत

मुख इन्दु विन्दु म घायल
मघु रितु के स्वर जा बसते

सब डूबे वे पल सुखकर
हो गया कैद मेरा शशि

किस गहन विरह सागर मे
किस कुटिल अध गागर म

फिर सावन घिरा है

मानता हूँ आज फिर सावन घिरा है
नन में झिलमिल वही सपना तिरा हूँ
किन्तु अब मैं पयटक छवि का नहीं हूँ
भूख के तूफान से लडता दिया हूँ

कल्पना का बाग अब बीमार है
हार से झुलसा हृदय सुकुमार है
जुलमता से युद्धरत मैं वह सिपाही हूँ
रूप का भाता नहीं व्यापार है
पाप के मुख पर पुती मैं पुण्य स्याही हूँ

मानता हूँ आज फिर बिजुरी कडकती
बूद तेरी याद के पत्तन उलटती
किन्तु अब भ्रमण का खाता वही हूँ
वायु से उडता सिहरता आशिया हूँ

भावना के हाथ में अब आग है
आपत्ता के नित्य डसत नाग है
झूठ था वह पिकनिका में झूमना
सत्य पथ है मील है फर्क है
प्राण भर दयाल को मत बाचना

मानता हूँ आज फिर झरन युवा हूँ
काटता पर आज गम का बेचुवा है
दूध सी उम्मीद था सहता दही हूँ
बेमहारा एक जीवित मर्मिया हूँ

धुंध हूँ पर भोर वाली धुंध हूँ
आज भरकर तल उगूंगा, चंद हूँ
हैंस लुटूंगा मैं अभावा का शलभ हूँ
पर शमा की नक्ति हूँ जानन्द हूँ
ब्राह्मी दीपिन मैं अखडित आह नभ हूँ

मानता हूँ आज फिर पुलकी धरा है
लात ठोकर किन्तु मरी अप्सरा है
कामना की हूँ इमारत जो ढही हूँ
गात तो निर्जीव पर स्पदित हिमा हूँ

कौन वह

साँस साँस म वसी सलोनी कौन नगरिया लूटल रे ।

आँखो म छल छल जल बन है
अधरा म आकुल तडपन है
सपना का रोया, दपन है
भावा का अतर अपन है
गीतों मीतो का बिछुडन है

योवन रस स भीनी भानी कौन कमरिया टूटल रे
सास सास म वसी सलोनी कौन नगरिया लूटल रे

ये उजने दिन काली रातें
ये भू के कुसुमा की पाँत
ये सध्या लो छिपी प्रभाते
समय बिहग मुड उड उड जाते
मान मिलन पल हाथ न आत

निरमल निशा प्रतीक्षा बाशिल कहा सवरिया सूतल र
सास साँस

जनम हुआ जब विरह हुआ है
आयु भर निष्वास हुआ है
पौडित मरा रआ कुआ है
जीवन क्या है घना धुजा है
अश्रु हास मय एक जुआँ है

में तुमस मिलने को आकुल पख उमरिया टूटल रे
साँस सास

जीवन यह केवल सपना है
चिर विरहाकुल तप तपना है

मुसवानें आसू जपना है
पीडा को बरवस धपना है
ना जग मे कोई अपना है

पीडित है सब भीत स्वजन गन गाँव-नगरिया घूटल रे
साँस साँस

मैं चलता था धीरे धीरे
निश्चरणी के तीरे तीरे
अध अमा को चीरे चीरे
बहती आशा जी रे ! जी रे !
प्यास लगी तो पानी पी र

मैंने बढ पीना चाहा तो हाथ लहरिया रूसल रे
साँस साँस

पानी म नलिनी कुम्हलानी
शफरी जल मे प्यासी जानी
पवन चले पर श्वास खानी
महा मिलन क्यों मरना जानी
सत्य न पाये बढ बुध जानी ।

मैंने जब आवरण हटाया प्राण पछुरिया टूटल रे
साँस साँस

धरती

प्रण

लाख बिहसा निमिर की शाहजादिया मेरे चरण पर
दखना मजिल अकेले भोर पहले टोक लूंगा ।

है बिछी नव सेज पत्थर भूल की वीहड डगर मे
मानता हू प्राण का हर दोस्त मेरा सग साथी
घूलि घाटो पर नहाती आधिया की बालिकाए
निवसन उ मुक्त कामुक हैं पढी निज खोल छाती ।
वृक्ष के चल कुन्तलों को गूंथता है पवन पापी,
ओर गर्जन तीर से गदन उडाए चाद-बाती ।

लाख दौडो घकन की बिजली कि मेरी घमनियो मे,
पाक लख कर पाव गर मेरे रुके तो ढाक दूंगा ।

मेघवा ! तू खूब इठला कर बरस जा आज निशिभर
शाहिया ! तुम आज जो भर छाँह मे शत साँप भर लो ।
जुगनुओ ! तुम दूर वन मे जा मनाओ रे दिवाली,
ओ झरे अगार ! सुलगो भूमि नभ को एव घर लो
नील अम्बर ! ओस-कण को विप भरे तू बम बना दे,
मरपलो ! तुम भी न सोचो हरितिमा का आज घर लो ।

किन्तु बागी पाव के निश्चल सिपाही तू चलता चल
शपथ रवि की मैं जगत की तोड जालिम जोब लूंगा ।

ओ प्रिया की माँग ! निज सिद्धर निशिभर पीछ रहवा
कल सुबह ही भाल पर चिरधुबनी सिद्धर दूंगा
चूडिया की खनन ! निशिभर सङ्गता गा भीग रहना
लौटते ही रव मधुर भुज उधाती भरपूर दूंगा
आज तो सघप सागर के भवर म योग दूंगा
मैं उपा स पूव साहित का अन्ग १५ भूँ दूंगा

साहसी मदिरा पिए य पैर या बदन रहे तो
आस गजगामी कुमारी विजय छिन म मोह लूंगा

पाय सम मैं किस बदर भी पट्टु धनुर्धारी नहीं हूँ
भीष्म हूँ तम ने शरीर की रात सारी झेल लूंगा ।
साँस पुलके, उस मधुर मधुमास की सौगंध मुझको
रक्त भरा उष्ण तो पतझार का खुद ठल दूंगा ।
ओ शराबी कोपलो ! मत पथ म तुम नयन फेरो
मैं नया ज्वालामुखी जग को अमर रस धार दूंगा ।

भूख बाधित हो न मग क चाँद तन विक्रय करी अब
रात से लड लू, सुबह गजरें मुहागी बाँध दूंगा ।

श्रम की सदा विजय होगी

श्रम की सदा विजय होगी ।

शूला के तीखे डंका में,
आईंघी के निमम पखो में,
गजन के भीषण शखो में,

मन की आस न क्षय होगी ।

पय शत विघ्न मप लिपटे,
पर न कही भी पग सिमटे
मिलें सदा विप की लपटें,

तम मे सास न लय होगी ।

भू-नभ गूजेगा बार-बार
मानव की जय का महोच्चार,
खेतो मे झूमे विमल ज्वार,

श्रम की सदा विजय होगी ।

श्रम की सदा विजय होगी ।

एक निराशा, एक आशा

आँसू भोगा हर एक दिवस ।

जाहो के उडत मेघ विक्ट,
झरझर झरते हर हय विटप
चीखो स माग गया सब पट
मानव दुबल औ दीन विवश

मक्की क मेले म बयार
लडखडा रही शलथ हार-हार,
दू-दो का जीवन दुनिवार,
योवन पूजी स कद, विवश ।

पर नई भोर की किरन नवल,
बोएगी थ्रम क बीज मदुल
सवर्षी होगी स्मिति पल पल
गूजेगी मानव जय ध्वनि हँस ।

शत श्रम के दीप जलाओ हे ।

बहका बहका है पवन आज,
दहका दहका है सपन साज,
घरती की तुम हा वसन लाज
शत श्रम के दीप जलाओ हे ।

गौरव-गरिमा सब छिन भिन
मन आलस प्रिय, कतव्य खिन
सर स्नेह विनय के शुष्क, क्षीण
नित तम मे चरण बढाओ हे ।

कफनो से आवृत शुभ्र प्रात,
हड्डी मे तडपा मनुज गात,
पौरुष की गया कीच स्नात,
पथ के भ्रम-बाध ढहाओ हे ।

मानव से मानव करे प्रेम,
श्रम-आलोकित हो नियम-नेम,
नित बढे मनुज मे प्रीति क्षेम
मधु स्नेह—अनागत ब्याहो हे ।

अभाव का आलोक

आ तू
याद बन
मेर बिछरे वालो म
अँगुलियाँ मत फर
लाल नीले बनर
और झाडिया के बेर
—भी—

कभी
मेरी एकात्मता के भागीदार बने
अलम है ।
दूर का अशोक
कलम की गतिशील नोक
पास रहे
अभाव का आलोक
—क्या कम है ।

नई ज्योति का गीत

श्लथ जन की चिर प्यास हरो हे !
हर मन म उल्लास भरो हे !

निर्माणो के देवालय मे
घौवनमय नव ज्योति जगा दो !
सदिया से धरती की दुल्हन
विधवा है, फिर भाग रचा दो !

हँस हँस के दुख शोक हरो हे !
दीपक बन आलोक भरो हे !

पीडाओ की अमा निशा है,
पग पग साहस दीप जले फिर !
पतन तपन की प्रखर लहर मे
सपनों को दृढ नाव मिले फिर !

प्रलय निशा को भोर करो हे !
दग्ध दिशा श्रम रोर भरो हे !

चरण बड़ा दा ओर बढ चलो
जीवन मे मग्राम अमर है !
दीन नियति की यति को गति दो,
स्वेद रक्त का घाम अमर है !

पूत राष्ट्र की चुभन हरो हे !
मग मग म सत दीप धरो हे !

शत शत स्वागत पुन्य दिवस है !

स्वर्ग चरण से तोड़ तिमिर हृद मण्डल
प्रघर प्रभा के जमर पुन अय मगल
द्रोह वाहिनी शक्ति हरो उच्छ खल !
भ मानस के प्राण कलश है !

भाव-हस के मुक्कन परो पर शोभन
बैठ भारती उर मे उतरो मोहन
आलोकित मग, सजनमयी हो शोधन ,
जीवन क चैतय निमिष है !

लोक भूमि पर आजादी की गीता
मुखरित हर अधरो स हो नित्य पुनीता
वाणी शिव सुन्दर सत्य प्रणीत प्रसूता ।
उतरो भ पर नेह विवश है !

गणराज्य से

ओ शिवमय गणराज्य तुम्हारी जय हो !

लोकभारती के मन्दिर मे
वज्रती रजत विहग घटिया ।
कम-सूय, अभिनव प्रकाश से
आलोकित जन भाव घाटियाँ ।

भव, आंगन मे पचशील के
गौरव मय पौधे के नीचे,
स्नेह हास की शत नहरो स
जन मन का बन बन सीचे ।

लोक राज्य मे कही न भय सशय हा ।

जीवन के मधुरिल मानस म
विश्वासा क कम न मिले फिर ।
राग-द्वेष मे रहित हृदय को
सबल के वर हम मिले फिर ।

निर्माणा के महा ज्वार म
तन्द्रिल लाक चेतना जाग ।
उत्साहो की अरण उपा मे
स्वप्निल स्वग रचाना त्याग ।

लोकादय की निभय सदा विजय हा ।

नयना के पय भावी का रय
जाप्रति घोष सुनाता, आये ।
शक्ति, मान, साहस विवक की
सत्य-मतुर्दे फिर पहराये ।

अध अमा का चीर चीरता
फिर स प्रभा लोक आ उतरे ।
वापू, ठाकुर और विनोबा के
सपने सच्चे बन बिछरे
लोक भूमि से दूर विनाश, विषय हो ।

दीपोत्सव की आग

मानव की मानस कुटिया में, नयनों की सूनी बगिया में
सपनों की रोगी दुनिया में, कितना घुप्प अधेरा साथी !
दीपा शिखाभा के उत्सव का हृष मुझे नक्ली लगता है

मैंने बोया स्वेद, फसल काँटों की पाई
तितलीपाखी देह सम्पण में झुलमाई
कतव्या के लाक्षागृह में हँसते हँसते
विमल जवानी तपते जलते राख बनाई
आँसू की जलधार चढ़ा कर, पीढा का चदन लेपन कर
चीखा के पवि शख बजा कर पाया दद घनेरा साथी !
दीपमालिका के बन ठन का रग मुझे जगली लगता है

नीति घम ने मेरे पथ में विषधर फेंके
बिजुरी, उल्का, शलभ ज्वाल में मैं देखे
लेकर मन उद्विग्न आग को पान किया है
जीर किए हैं पार समुन्दर गरल-अनय के
प्राणों को बाती कर जाला, सासों का नहा जल ढाला
किरण न फूटी, हटा न जाला पूजा एक लुटेरा साथी !
सधमी स्वागत हित गूजे वह राग मुझे डफली लगता है

कब होगा उजियारा, सूरज कब चमकेगा ?
धर्मजीवी इसान देश का मुकुट बनेगा
आओ मिलकर बन जाएँ हम सबक साथियों
जिस पर हो जारुढ क्रान्ति का रथ गुजरेगा
मानव के उत्सव-त्याग में, प्रखर पत्नीन के पराग में
शक्ति बफ में नहीं, आग में, योती सुख सबेरा, साथी
बिन बदले यह जगत मुझे तो मरी हुई मछली लगता है

जागता चल देश मेरे

साधना का दीप लेकर आधियो मे
युग युगो तक जागता चल देश मेरे ।

जनमते ही आह तूने फूट विघटन द्व द्व दखा
क्षीण जिससे हो न पायी कम की पर भाग्य रेखा ।
और फिर कठिनाइयो का मेघ आया घन घहराता ।
नेह की दुनिया वही है रह गई बस दन सिकता ।

रश्मियो से प्रेम की तू सप्तियाँ कर
छल तिमिर को चीर घीर दिनेश मेरे ।

सजग हो कर फूक दे, अब पचशीली शख कोमल
युद्ध की हुँकार बबर हो रहे फिर आज धूमिल ।
एशिया की वादिया मे गूजतो मधु मुक्तियाँ हैं
शांति सह अस्तित्व मे जग दूढता सुख-युक्तियाँ हैं

चेतना की नाव लेकर सहारिया मे
तैरता चल वीर भरत निवश मेरे ।

गीत

हाथ में मशाल से जोश का उबाल से
तिमिर के कपाल को फाड़ते चलो ।

और सिर्फ तू नहीं, साथ में सितारे हैं
पवन में पले मंदिर जीत के नगारे हैं ।
दद सेकती हुई वृक्ष की कतारें हैं
सपना में सिली नयी शबनमी बहारें हैं ।

प्रीत की पुकार पर गीत के खुमार पर
दद की मजार को तोड़ते चलो ।

जिन्दगी तो राख में आग का उफान है
पावसी घटाओ में बाढ़ की धकान है
जिधर आदमी बड़ा, कड़ा नया बिहान है
मनचली निगाह में हर घड़ी जवान है ।

मोह के विकास को, भौह के तराश को
प्रगति के हुलाश में मरोड़ते चलो

पुकार

मैं न धरा को आसू ढरत देख सकूंगा
स्वस्थ भुजा से हल तुम हाका बँल मुझे दो ।

अब न ज्वार को हथकडिया मे बाध सकोगे
अब न सत्य दीवार तनिक भी लाँघ सकोगे,
अब न गाव के पनघट विष का कलश हँसेगा
अब न कृषक की स्वप्न साधना चाक सकोगे ।

अब न उम्र को विधवा होते देख सकूंगा
फसलो म पानी तुम मोडो चरस मुझे दो ।

अब न रक्त का सौदा या नीलामी होगी
अब न तिजोरी तिल गेहूँ की रानी होगी,
अब न अकाली छाया भू पर कदम धरेगी
साम-तो का चौपड' अब न अवाणी होगी

मैं न खेत को नगे होत देख सकूंगा
हर गलियारे छाँह उगा दा, धूप मुझे दो ।

मैं न धर्म का दास हूँ

मैं न धर्म का, परम्परा का दास हूँ

कमशील मैं अपना खुद इतिहास हूँ।

जो नई भोर का स्वप्न रचाए लाचन म

नित बड़ी धूप में बैठ तोड़ती है गिट्टी।

जो बाँध, बाध कर मस्त नदी की छाती पर

नव नहर बनाने हेतु खोदती है मिट्टी।

जो छाछ बिलोती और थपती है छान

जा देती मधुरिम अन्न जलाकर मन भट्टी।

उही देवियों की आहत मैं श्वास हूँ

श्रम के गिरि का गौरवमय कैलास हूँ।

जो पीत तितलिया पक्कड़ झूमते बागों में

जो सरिता तट पर रेत निकेत बनाते हैं

जा पावस रितु के बहुत गदले पानी में

खिल नई लगन से कागज नाव चलाते हैं

जो युवक पिता के सग जागत खंता में

हठधर्मी कर हल और चरस हँकाते हैं

उन्ही बालका की मैं कामल आस हूँ।

नव भविष्य का रूपक हूँ, अनुप्रास हूँ

जो आकाशों में क्षरी धिलम का धुजाँ उडा

जो धकी उमर की विगत बात बतियाते हैं

जो निमल निझर श्वेत कपासी कशा से

पगडिया हटा ठाकुर द्वारे झूक जाते हैं

जो जजर तन पर भार उठा अभिशापो का

दृढ़ सघर्षों की चक्की में पिस जाते हैं।

उही वृद्ध मनुजों का मैं विश्वास हूँ

मर मर कर जो जिए वही मैं लाश हूँ।

प्रजातंत्र की वर्षगांठ पर

प्रजातंत्र की वष गांठ पर बल्य जलाने वालो
तीस जनवरी राजघाट पर अशक बहाने वालो
कभी भूख से बातें भी की होती ?

जनमन की चेतन सीता को
बहकाया क्या दिखा स्वर्ण मग
आदर्शों के सरल शलभ का
दहकाया क्या दिखा दीप दग ?
प्रजातंत्र के पुण्य दिवस पर ध्वजा उडाने वालो ।
राजघाट पर झूठी कलिया फूल चढाने वालों ।
कभी रक्त की आहुति भी दी होती ?

जाग उठा है अबकि आदमी
छल की नित्य पराजय होगी ।
पूव अरण है नई उपा से
सच की जीत शीघ्र ही होगी ।
प्रजातंत्र के पुण्य दिवस पर गैल सजाने वाला
पुण्य तिथी पर छल से भारी शीश झुकाने वाला
कभी राष्ट्र की पूजन भी की होती ?

विकास का एक निवेदन

अब न रोके से रबूगा अग्नि ध्वज हूँ
झूठ को मैं ध्वस्त करके ही रहूँगा
मत मुझे दपण दिखाओ बाल रवि हूँ
रात को मैं अस्त करके ही रहूँगा
पक मे बाधो न पग को, यत्र रथ हूँ
लक्ष्य के सी कोस चलकर ही रहूँगा

द्रुप ईर्ष्या से भरी आलोचना से
आत्म बल का अश्व क्या गतिहीन होगा
औ प्रशंसा के स्वनिर्मित काव्य-रव से
चेतना का बल क्या मति हीन होगा
जब हूँसेगी हर अघर सतोप किरनों
देव दशन सा मुझे तत्र हप होगा

यत्न मेरा यह रहेगा प्राण प्रण से
खेत की राधा न अपने अथु बोए
बालिया खुलकर हूँसे निशिदिन हवा म
गाँव की चौपाल सुख की वाट जोए
आँख मे थिरके सुहाने स्वप्न नूतन
दुर्दिनो का भार ना कटि पीठ ढोए

मैं रहूँ हरदम नये युग का चितेरा
पीठ मत ठोको, मगर कुछ प्यार दो
बाढ मे भूकम्प मे, जल प्लावनो म
नित बढूँ मैं घडकनो का हार दो
मैं सँवाळूँ राष्ट्र को शुभ रवग मा
एक यह विश्वास दो, आधार दो

ज्योति का उत्सव मनाना व्यर्थ है

जब तनव है शेष जग म भूष का —
जड अमावस सा अनयमय तम सघन
ज्योति का उत्सव मनाना व्यर्थ है ।

यू कि सदियो स मनाते तीप दिन
किन्तु तन के साप को डमना कठिन
एक नव न्नी रावणी गड जीत कर
वन रहे हम खुद निशाचर दिन व दिन ।

शेष है जब तक धरा पर जजरित
बिल बिलाते कीट दल स दीन जन
स्वण प्रभु की अचना सब व्यर्थ है ।

निधनो की रीठ पर मदिर बना,
लक्ष्मी के चित्र को शुक पूजना
ध्यान पूजा तप-तपस्या साधना
व्यर्थ है जब तक दलित जन अनमना ।

जबकि सीमा पर खडा दुश्मन दनुज
लपलपाता विष भरी निज जीभ को
दीप द्वारे हर सँजोना व्यर्थ है ।

हो सके तो पास ला दो भू-गगन
चीर फाडो घन विषमता का वसन
स्वण चादी, रक्त भेटो राष्ट्र को
युद्ध के हित बाँध लो सिर पे कफन ।

मौत के घाटो उतारा भ्रष्ट जन
सत्य के बढ कर पछारा पवि चरन
ज्योति का उत्सव नहीं फिर व्यर्थ है ।

कौन शत्रु

शत्रु केवल सरहदों के पार ही जीवित नहीं हैं,
भूख, बेकारी, गरीबी शत्रु ही थे, शत्रु ही हैं।

जब वधू के वस्त्र ओं कर चूड़ियाँ स
सब भक्षी वज्र भी चुकता नहीं है,
जब शिशिर की रात, आसू-ओपधी स
पुत्र का जड़-ज्वर कभी थमता नहीं है,
दीघ-वय की कामना से, जब भजन से,
रण मा का घाव भी पुरता नहीं है
बोल रो धरती ! निठुरतम आसमा का
बूढ़ एक आसू कही ढरता नहीं है।

युद्ध केवल सरहदों के पार ही संभव नहीं है,
झूठ से लड़ना सदा से युद्ध ही था, युद्ध ही है।

आदतों को अब बदलना ही पड़ेगा—

'सेफ' में बँठी कि लम्बी ! आज सुन लो।

आग में चलता श्रमिक अथवा कि घन-पति,

इस सदी की माग ! सोचो और चुन लो।

अब न आयेगा जमाना लूटने का,

भूमि पतियो ! मत सगुन लो मत सगुन लो।

फूटने को है सुबह की वरद किरने

पापिनी मावस ! कि अपना शीश धुन लो।

रक्त-अपण ही नहीं है राष्ट्र का पवि पुण्य पूजन,

स्वेद का अपण सदा से भक्तिमय है, भक्तिमय है।

स्वर्ग से अनुपम बनाना है मरुस्थल

औ, भिलाई स नए तीर्थ सिरजना

भवन महलों को परसना कुटी पग है,

धूलि कण को फिर हिमालय पर पहुँचना ।

आदमी का धर्म है शाश्वत मनुजता,

मात भू हित जूझ मरना श्रेष्ठ मरना ।

एशिया के मुकुट भारत के जनों के ।

साम जब तक ! डगर पर है मुक्त चलना ।

शात्रु को रण में कुचलना ध्येय अन्तिम

देश का खुशहाल रखना लक्ष्य ही है ।

६८

दीपोत्सव

दूर तक अद्विराम गहरा है अँधेरा
 मत्स्य को छल कालिमा ने आन घेरा है
 ज्योति के घर पर गिरा कर बम विपैला
 कर लिया है कंद पूजी ने उजेरा है

वेवजह हर ठौर पर नवदीप के सपन
 हाय ! खुद की लाश कंधो पर उठाते हैं
 और शहजादे तिमिर के बैठ तूफ़ा रथ
 इस खुशी में झूम दीवाली मनाते हैं

यत्न के पौधे, मुजाता साहसी कोपल-
 रक्न की आशिक फिजाएँ चाट जाती हैं
 शोपणी मदिरा पिएँ सैलाब का नतन—
 चादनी को ये अदाएँ राम आती हैं

क्या अजब है खेल ! जो बीमार घायल है
 राह चलती भीड़ ठोकर कस, लगाती है
 स्वाथ की लका परम द्युतिमान रखने हित
 आदमी को आदमी की मौत भाती है

झूठ-द्वारे माज बतन पाप के झूठे
 पोडशी ईमान की बेटी, बिलखती है
 हाटलो भ्रष्टता का, किंतु कथाएँ—
 वाय मित्रो सग 'चा चा चा' कि करती है

धोपणाएँ प्रार्थनाएँ, मसविदा, भापण—
 पत्र की बिक्री बढाने में सहायक भर
 गिर रही ऋषशक्ति के सम्मुख अभाग्य नर
 बन गया चित्ताड के दड दुग का पत्थर

मुटिठयो म स्वप्न, अँखो म अमित जल भर
 मैं अकेला, कयो मनाऊँ आज दीपोत्सव ?
 आज जब अधिकाश की हस्ती नहीं इतनी—
 शोपणी म दीप का जो हो सके सदभव

भूमिका

अब अगर विद्रोह की ज्वाला बही फूटे
अब वही जो सूय की आभा तिमिर लूटे
आसमा के देव ! भू के रहबरो ! सुन लो
भूख स उत्पीडितो को दोष मत देना
भूमिका जनक्रांति की तुमने स्वयं रच ली

फूल अघरो से कि किसने अरुणिमा हर ली ?
छीन कर किसने बहारें सफ' में धर ली ?
क्यो बुढापा खीच रिक्शा ढो रहा दुखडा ?
गह बधू का गात क्यो है नग्न बिन कपडा ?
रोग महगाई, गरीबी, भूख से जजर—
हडिडयो का पुज ही क्या राष्ट्र का सहचर ?

अब अगर जो हडिडयो में ज्वार उफनाया
अब ममूचे रक्त में भक्कप गर आया
इस जगत के ईश ! ऊपर के खुदा सुन ले
जुल्म की तलवार का मत आमरा लेना
भूमिका जनक्रांति की तुमने स्वयं रच ली ।

भारतीय जनता के नाम हिन्दी की पाती

भारत की जन-शक्ति ! विश्व के शांति-दीप की दाती ।
प्रथम नमन ले मेरा, फिर तू सुन यह भीगी पाती ।

वैस तो मैं नहीं चाहती पाती तुम्हें पठाऊँ
इस सकट की घड़ी तुम्हारा हृदय कहीं भटकाऊँ ।
किन्तु अभी ससद ने मुझको किया अनत प्रवासी ।
सखी नहीं रानी अँगरेजी, मैं हूँगी अब दासी ।
इसलिए साचा तुमको मैं अपना बन्धु बताऊँ ।
तप्त स्वर्ण से धरे सत्य को कैसे मैं झुठलाऊँ ?

मेरा जन्म हुआ पीडा-घर, पाला मुझे अमा ने,
आसू आँगन बचपन बीता फाका सह अनजाने ।
फूटा यौवन अग कि काले साँपो ने धमकाया,
अँगरेजी का प्रेत कि मुझको जबरन बरने आया ।
भरी सभा मे उसने मेरा हाथ पकड़ घिसटा है,
आत्म-भ्लानि से गात जला है, भाग्य हुआ उल्टा है ।

भारत-दु, महावीर द्विवेदी औ, प्रसाद जय शंकर
इन लोगो ने मुझे सँभाला गिरी-पढी जब भू पर ।
टडन, गाँधी, गोविन्द की हू मैं कितनी आभारी ।
जिनन अपना कधा देकर मेरी सजी सवारी
एन्थोनी, अनादुराई ने भीषण घात किया है,
तुम न सुनोगे करुण-कथा तो मेरा कौन कहा है ?

दो प्रतिशत जनता की भाषा सब पर राज करेगी,
जहर भरे इस कोलाहल मे सस्वृति वहाँ बचेगी ?

क्रांति अमर है

सपनों के शत पख तोड़कर उड़ने वाली
आजादी के वक्ष पाश में मेरा घर है

पराधीनता के कूडल में छिन पात सा
एक दिवस विप फूत्कारो से मैं था शोषित
जुल्म प्रहारा के निमम तीखे डका से
किया जा रहा मेरे प्राणा का दाहन नित

उसी दिवस अनुभूति गयी थी यह
मन की अमा वेदना धू होती अक्षर है

क्रांति कुमारी के पायल की स्निग्ध हास में
यौवन के शत भानु उगो, आशा अरुणाई
सडा हुआ था सत्य युगों के कूठन में दब
दावा-पी चतय हुआ फिर ली अगडाई

और मरण के दशना में प्रणय लाश भी
गरजी भीषण वधन द्वेषी समर अमर है

झझाआ के महाकाश में आजादी की
शुभ्र पताका लहरी भुज दडो में पलपल
विद्युत गति से अधिकारो की ज्योति जली चिर
सघर्षों में बढा सजन जन सपूजन चल ।

निठुर समय की धलि रौदता चला कारखा
विध्वसा के वसन चीर दो क्षर पतझर है

मैं मानव हूँ निखिल विश्व की महत् शक्ति हूँ
वधन से लड मुक्त किया अभिशप्त धरा को
और जहाँ जब कभी मुक्ति की हवा बही है
मैं मानव हूँ जगा रहा सतप्त धरा को

आगत का विश्वास अनागत का मैं स्पन्दन
दग म अमिय निवान भृकुटी पर प्रखर जहर है

चाहे बेघो आर पार तुम मेरे तन को
बम के स्वामी ! मन छहरा है निखिल भुवन म
चाहे कर दो कैद तिमिर क कारागह म
नित्य अनश्वर मरी ही झकार पवन म

मैं मानव हूँ बीज मुक्ति के हरित वृक्ष का
पडता घोखा हर क्षण जागृत क्रांति अमर है ।

विद्रोह का झंडा उठाओ

भीख म मिलते नही अधिमार हैं

हाथ मे विद्रोह का झंडा उठाओ

ज्योति के घर पातकी अधियार का डरा

स्वर्ग के आलाक-पथ म साँप का पहरा

फूल का पावन पलेजा धूल म लयपथ

याय के मुख पर पडा है रिश्वती बचरा

नाश के तट पर खडा ससार है

हो सके निर्माण की बशी सुनाओ

खेत है प्यासे वृषब के गात रोए हैं

कंद है बादल चमन मे लक्ष्य खोए हैं ।

सिसकियो म डूबकर मजदूर की रानी

पोसती चक्की कि भूखे काह सोए हैं ।

हाट मे नीलाम होता प्यार है

मनुजता के भाल की कालिख मिटाओ

राह हर तनकर खडी बेरोजगारा ट

पर सिफारिश पद भवन म आपाधापी है ।

डिगरियो की सिद्धियो स मुक्त दवो की

भूख ने ही आरती आकर उतारी है ।

योग्यता की जीभ पर अगार है

नीचता की केन्द्र म होली जलाओ

एक दिन होगी सुबह विश्वास जीवित है

आदमी की जीत का बल भी असीमित है

झूठ की, पापद की चट्टान के नीचे

सत्य गंगा की अमर धारा सुनिश्चित है ।

सूय के आगे तिमिर की हार है

आँधियो को दासिया अपनी बनाओ ।

उजला और प्रभात करो

होने को हो गई सुवह पर उजला और प्रभात करो ।
प्रणयदाता की नहीं लेखनी रक्तदान की बात करो

मोहालसतज जगी भारती छूटा अभी खुमार कहा
पतझर मे स्पदन जो भर द उस वयार का पार कहा
त्याग वीरता के बलिबानी तारा का वह दौर कहा
राधा बिलख रही जगल में मनहर माखन चोर कहा

प्यार यहाँ क्या कुचला जाता फौलादी तलवारा से
विधवा लगतो रात सुहानी पूछो चाद मितारो से
मतलब की मदिरा से पागल मुक्क हमारी साँसें हैं
एक और मस्ती का आलम एक और जड़ लार्सें है

निर्माणा के महाशोर मे घटती निधन की आहे
तुम न सुनोगे मीत कहा फिर देग कौन उमे बाह
आजादी के महाकाश में बिखरे सपना के तारे
तन के बधन कटे कहा यदि हृद्ध प्राण के चौबारे

आज तितलिया के अधरो पर शाश्वत क्या मुस्वान नहीं
घायल मत बीमार सुमन का झेल रही क्यों भार नहीं
आज हजारों हाथ काम बिन टूटे से निर्जीव हैं
बिना परिश्रम मौज उडात वे पामर जोर क्लीव हैं ।

सुख का सपना सचमुच सपना आज समझत हैं निधन
माली ही क्यों लूट रहा है नई कली का क्वारापन
आदर्शों के भवर भवन की नीव घणित आचारा पर
शब्दनम के मामूम पने का भाग्य घरा अँगारा पर

भारत का भवितव्य डौलता निठुर बटीली राहो म
शहनाई क्यो रो उठती है उत्सव लगन विवाहो म
राप्पी वाला हाथ बहा का जदिरल यह कम्पित क्यो है
बुकुम वाली मांग प्रिया की रौनक शबित क्या है
चुप रहो मत उष्ण खत अब नया लक्ष्य सधान करो ।

भारत को छुशहाल करो या अपना जीवन दान करो
होने को हा गई सुबह पर उजला और प्रभात करो
प्रणयदान की नही लेखनी खत दान की बात करा

पगडडियाँ

बूदी का पतझर

यह इतराती बहती बयार,
बूझो स पत्रा का झरझर !

पीपल के पीले पत्रा -
पट गयी राह हर गलियों की,
उपवन क सिहरे भीत विहग,
गुमगुम आहें हैं कलियों की ।
घोचडा, नीम, पीपल, बट स
भागी हरीतिमा फडवा पर ।
अबुवा, रेणी औ नीबू के
तन मन पर गमका ममर स्वर !

नगे अरावली पवत पे,
ठिठुरा ठिठुरा-भा मौन क्षितिज !
उड्ड समीरण स डर डर,
गूहणियाँ सभाले पट निज निज ।

यह बूदी मे उतर पतझर
अणु अणु कपित है सिहर सिहर !

जेठ की दुपहर

जेठ की जलती प्रखर दुपहर विमल

सोचता हूँ आज कितनी दिव्य है।

खेजड़े की छाह में लेटा हुआ

मैं बबूले की कि अचका थामकर

घर रहा हूँ तप्त रजकण माथ पर

शुभ्र स्पन्दन का मुकुट कुडल प्रवर।

नू विगमिन की जलक अलका अमल

लुट रही मधुज्वाल जैमी भय है।

माग पर चलते पथिक समुदाय के

ज्याम तन पर स्वेद परिया गौर ये

हँस रही हैं कमल कुदन जाल-सी

आभ्र श्रम की श्वेत झिलमिल बौर ये

लुक कहा बठे नयन चुनसान के

जो अदेखे भोर जस नय है।

पीत पत्रो में गलत म्हावर रचा

नत्य म रत है निखिल बभावतो

घासले के द्वार पर स झाकती

इक बया किसके लिए है बावली।

कोटि किरनो की धनी नभ मूरती

युग युग स आदमी स सध्य है।

बूप सागर ने हृदय पथ अघ्य मे

द दिया है प्राणघन पवि सूर्य को

नभ दिगम्बर राधिका के बत-सा

क्या बजाता है पवन के तूय को।

घास पशुदल को चराता गोप जो
नवल भारत का वही भवितव्य है ।

दूरद्रष्टा चीन इव यौवन मयी
घोक्डे पर बैठ प्रिय पर चूमती ।
भग्न मंदिर की कि भीनी छाह मे
चुप कपातें मार भैना ऊँघती ।

आधिया की वीन यह मायाविनी
और नीरद गोप सी धुन श्रय है ।

धूप के तन पर खिला तारुण्य है
नित्य आभा से विभूषित भाल है
यह आपाढी प्राण के सपने रची
गाल प्रिय की कल्पना से लाल है ।

वह क्षितिज की नील पगडी सावनी
फागुनी दिन के बिना दष्टव्य है ।

दिवस के मन का अमर सौंदर्य स्थल
तप्त या अभिशप्त यह कैसे हुआ ?
मीखचो म काल के कयो वैद है
धूप का मधुरिल, विक्ल विरही सुआ ?

प्रश्न उत्तर से उसे मतलब नहीं
पथ ही जिसका स्वयं गतव्य है ।

लू के प्रति

ओ अबुलीन, कुचालिन, विरहिन सौम्य सुदरी
किसे ढूँढती तप्त हुनामन पर फलाये ?

लूटो है क्या किसी का ह ने मन की गगरी
किसी राम की या गह त्यागी सीता हो तुम ?
ओ उशीर अभिशापित तापित कात किशोरी
नियम वधिक क दड बाण से या भीता तुम ?
तरुण जास्र के स्कध माय धर क्रदन करती
वद्ध विटप के चरण थाम कर सिसकी भरती
तप्त ताप झोली ले मादक ऐद्रजालिके !
याथावर पवमान सहचरी या गीता तुम ?

प्रतियोधो की कौन वह्नि जन शत्रु ऐसी
जला स्वय निज तन, परजन, परिजन जलवाय ?

रात

सलज उतरती निशा शशिघर
कलश इन्दु का स्वर्णालोकित ।
तारक छचित शुभ्र साडी से
परिवेष्टित है गात जामुनी ।
नवल बधू सी सकुच नेत्र से
देख रही शुचि व्यस्त मेदिनी ।

द्वार किसी गहणी के रुककर
देख प्रतीक्षाकुल लोचन सर
बजा श्वास के मथर नूपुर
शियल हुई उर हृष गोपिनी ।
विष्ठा दिए नीलम तालो ने
विमल भाग पर उत्पल लोहित ।

नीड निवेदन मे खगकुल शिशु
श्वेत ज्वार के स्वप्न विमुग्धित
युवति नीम के नरम गाल पर
अमित निवोली सीकर दीपित
दिशा निवृजो म समीर स्वप्न
चिर समाधि म नील शैत-वन
दुल क व्योम दगा के खजन
छयाती को बह्ला अपरिचित ।
सुरभि बष रजनी गधा स
विखरी ज्यो उर बात मुग्रथित ।

अमरण प्यास युगा से प्लावित
कभी सदेगी चूम सुमन को ?

छिटकी तडित बाल वारिद से
धाम सवेगी नही गगन को ?

कीलाहल का वणु विगुजन
मूक भित्ति का थी आवत्तन
सस्मृति कला सम्यता नतन
पूज सकेंगे मनुज रदन को ?
मनुज प्रेम का वाव्य नही क्या
विश्व पत्र मे होगा छदित ?

प्रातः

धकित हृदय के अमल अचल से
याद बालरवि अमश विकसा ।

लोचन के चुप नील ताल म
प्रमुदित छिले अशु के अम्बुज ।
विश्व विपिन म लगी थिरकने
बलखायी श्वामो की मलयज
कसकन के प्राची ललाट पर
दिया चुभन ऊपा ने चुम्बन
करन लगी विगत का वदन
सुधि आराधक स्पदन सत्वर ।

प्यास रश्मि के तीन छुवन स
बिसी गात का हिमगिरि तरसा ।

चिर अभाव की ज्वलित चिता पर
दाह क्षणा के पाटल चटके
ध्वस्त आस के भग्न भवन स
सपना के शव के शव प्रकटे ।
मधुर दाह के जग खगो की
ध्वनिया मुखरित रजत निहारी
माग रही बरवटे मधुवरी
चन्द्रकाय छवि जलक नगो की

पादप अधर गूज ममर की
सिसक रही बया वेणु ककशा ।

आयु ज्यष्ठ की बडी दुपहरी
धौवन शुक्ल मोर सा रवितम

विरह दूत तुलसी का पौधा
मिलन प्रपत्र कुसुम-सा कृत्रिम
नेह रहित जीवन मरम्यल मत
शुचि प्राणा का ध्यय देय हो
तृपा दिव्य युत प्रेय श्रेय हो
कीच प्रसूत करे शत शतदल
लोह अचल हर स्वर्ण बनेगे
यदि कि प्रणय का पारस परसा ।

गाँव का गीत

पुरवा की छड स

खेता की मेड से

गीत उठे प्यार के ।

जगी जगी आई नई सूरज की किरने

गया के सग सग बछिया चली चरने ।

पच्छिम के भग मे

बादल के जग मे

रात चली हार के ।

फसला की रानियो न हसिया सँभाल ली,

युवको की टोलिया ने गैती कुदाल ली ।

पायल छन बोले

चुनरी सिसक डोले,

ढेर लगे ज्वार के ।

जीवन खलिहान से कटि बुहार दो ।

जन-जन के बागन की पाडा ललवार दो ।

कोकिल की बीन हो

गान फिर नवीन हा

फामुन-त्योहार के ।

वायु से

आ चल प्राण ओ वायु सरल ।
किस आस वाम स मंदिर तरल
निरती हा जग म स्पश विरल
माहक तरा कच जाल सखी ।
माहक तरा हिम भाल मखी ।
सगीत भगी मदु चाल सखी ।
कयो खिली कली के बाह डाल ?
तुम धिक्क चूमती जरुण गाल—
बन्ता की साडी का उछाल ।
जो हीन क्षीण हा घण्य निवल,
जो गिरता फिर फिर सँभल सँभल
जिसका जीवन झझा स चल—
तुम उम दान दो परस नवल ।
नघप कर वह फिर गल गल
गमरु जीवन म हास अमल ।

चतुष्पदियाँ

सावारिस सपनों की राख उड़ी जाती है
शहर के चौराहे पर चीलें चिल्लाती है
कटुता के खेतों में आमू की गर्मी में
चाहों की नरम नरम कोपल जल जाती है

रिक्शे की चेन में टांगे जकड़ जाती है
भट्टी की ज्वाला में चमड़ी पक जाती है
मिथ्या की महफिज की आजाएँ ठुकरा कर
मृत्यु का जहर पीकर आत्मा मर जाती है

घर में और घर बाहर मतलब का रोदन है
मोना ही बिस्तर और मोना ही भोजन है
समता के शब्दों को दुहराना व्यर्थ चूनि
दिल्ली के जधों का नाच रहा शोषण है

भूख के बियाबा में दूर तक अधरा है
डगर डगर बटमारों चोरों का डेरा है
कलिया के मुखड़ों पर शुद्ध हसी कैसे हो ?
बादल की साकल से बंद खुद सवरा है

हृदय हृदय पीडा का भाई बहन लगता है
आदमी मिट्टी में लाख गुना सस्ता लगता है
काटा के साप भरे मारग पर चल कर वह
एक बार जीता और हजार बार मरता है

कौन सुबह हागी जब बालें मुस्काएगी
फूला के गहना से धरती लद जाएगी

खेतों की मेढा से चरवाही जाएगी
परदेशी सजना की आँखें भर आएगी

कौन सुबह होगी वह ममता जो लाएगी
कुटिया के शापो से बिल्डिंग ढह जाएगी
जनतन्त्री थाली में खुशिया के दीप जला
कौन सुबह मजदूरिन हुलम उमग जाएगी

चाँदनी झरती है

दूर तक चादनी झरती है ।
पीपल के पत्ते का ममर स्वर—
फड फड फड ।
नीम की बौरायी कलियों का चटखना
चड चड चड ।
बडवी सी सौरभ का दूर तक साम्राज्य ।
सरोवर की
नीली और पीली सी, साँपो सी
लहरो का
छप छप छप अविभाज्य ।
भूरे ऊँघते पहाड़ों का
आँख बाँध
चुप्प साध
हल्का सा धीमा सा
खर खर खर
तारों का
आख भीच
बदली का बसन खीच
बधुओं सा विहँसना
ह ह ह ।
और इन सब म
मेरी पीडा का आलोडन
सासा का विलोडन
नीद नहीं ले पाता है—
निराशा का चिर दीप
बुझ नहीं पाता है ।
च च च
हैं हैं ह—।
दूर तक चादनी झरती है ।

गीत

यह सोने सी साक्ष सुनहरी
ये आभा सागर की लहरी

रूपो मे ढल सुपमा गहरी, सहमी छिपी बालिमा छाई ।

लौटे खग आभा पख खोल
पत्तो का ममर रहा डोल ।

मदिर से गमवे शख डोल चदा की चूडी शरमाई ।

धीरे धीरे डरती डरती
नत लोचन घन अलक सँवारती ।

सहमी शक्ति भीत लहर सी सखि । याद तुम्हारी आई ।

गीत

साज हर
यह उजलती पाँख
व्योम उडते खग कुलो का नाद
हिया मग मे झाक

बिलख पढती है अघूरी साध
खिडकियाँ ताक
सिहर उठती मौन सासे लाद
डबडवाती आख

आज कोयो म तुम्हारी याद
स्नेह-पीत्रे, वेदना की याद ।

कीले

मेरे मुख के
पीले पिचके गाला की
गदली उबड खाबड
घाटियो क आगोश म
वबुल के अ सम तने पर
उभरी गाद सी
प्रभा के काँपते
अँधे अँधेरे मे
नीने आसमान मे
विकसी
शरावी घायल
तारिकाआ मी
खजडे के
अशेष त्रोग की भागीदार
आभा हीन कुरूप
नीकदार
कटक विशोरिया-सी
हृदय रहिन आँगन पर
बिछरी
तीछी विपाद भरी
कँवर-नुमारिया-सी
बही अति दूर
निप्पपट पयरोली
भूमि म
चरती अगतिर्नाल
वेयदूप

शिशु-वकरियो सी
कही-वही
भिडा बे छत्ता सी गडडेदार
बेशरम आचारहीन
इठलाती
अनगिनत कीलें
उभरी हुई है
मेरी उजली आत्मा पर
मेरे शरवती मानस पर
मेरी बेमोहताज वाणी पर

ए ! मन की प्यासी श्वास

ऐ ! मन की प्यासी श्वास !
उबल मत पिघल मत
धीर सी धीर बन !
मैं हूँ अरहूड एक शाप ॥

दुग्ध स्नात रात आज
मक्खनी घटा की
लटें साज रेशमी
फेकती मन स लाज
तैरती अम्बर की
नील शील झील म
नेहिल नौवार्यें तारो की
सपनो के बाध पाल !
सर्पिले बर्फीले पवन की
बल खाती लहरिया
सजा रही झीना नाज !
नशीली शरमीली कोपलें
तेजाबी छाया के
दपण मे
रूप देख
नन मूद

सिहरती बार बार
चाँद का देख ताज
ऐ मन की प्यासी श्वास
मैं हूँ अल्हूड एक शाप ॥
मरे मन प्रागण म—

अमा का तम अशेष,
 भावा के प्रेत, शेष,
 बदल कर रग वेश
 घूर रहे निर्निमेष ।
 दद के विच्छू अनेक
 नेह की नरम
 नई नगरी मे
 जगाती विपैली आग,
 पिघलते रहस्यपूण
 विल्लोरी कई राज ।
 पीडा के यायावर
 गूजा रहे यो आवाज—
 गाँठा मे बाध ले
 ढेर म अभाव-प्याज ।
 भले भविष्य म
 अतीती खाद्य यें
 आयेंगे निश्चय काज,
 जैसे—
 उफने औ भौराले
 अम्बुधि म
 पार का आश्वासन
 देता है दड जहाज ।
 शतानी भूख जैसे
 आयगी यो न बाज ॥

ऐ । मन की प्यासी श्वास ।
 छेड मत याद के
 करुण राग ।
 अनगिनत मोड भरी
 पगडडी पथरीली जरूर है
 लेकिन सुन बात जरा,
 दूर नहीं स्रोत भरा
 बीत रही काट सी
 घड़िया यें,

जगती चल, जीती चल ।
प्यास है सुरभि
घायल रुमालें
शाप है मादकता ॥
नजर मोड मनुहारें
शरमा मत ॥

प्यार का भवन

हमारे प्यार का आलीशान भवन
जिसका उद्घाटन तुम्हारी बपगाँठ पर हुआ
आज भरी सालगिरह पर ढह गया है
वासना की रतीली सीमेट रहित
नीव पर टिका
रूप की नवली पालिश से दमका
आकषण के रिशवती इंजीनियरो द्वारा निर्मित
कृत्रिम सौन्दय प्रसाधनो के
बगीचा सा सुरभित
रेशमी अवगुठन खिसका कर
पिचके गाला और कीला ममेत
जब तुम्ह निहारता हूँ
तो लगता है
अँधेरी रात में कमरे की खिडकी खोल
पूनमी चाद को
चलनी की ओट स
दख रहा हूँ

रात

खिड़की में झांक रही चादनी नवीन
बरगद के ममर की बगती है वीन ।
मनुवा वीराये अबुवा के वीर सा
नयना भर आय अनव्याह भार-सा ।

दूर कही यादो की उठती है गध
सौरभ से घायल है शरमीले छन्द
बजरारी फैली है कसकन चहुँ ओर
खेता की मंडा से बशी का शोर ।

सुधियो के पनघट पर व्यासे हैं गीत
रूपो की गगरी से उगते सब भीत ।
चरवाहे सोते हैं नयना को मूढ ।
ढरी हाथ ! कोई आख बढता ज्यो सूढ ।

गना मे भरती है चौकडी बयार
शवनम वन चू पडा रे विरही दुलार
चम्बल की लहरो में तारो की आग
धीमे से निबुजा पर बोला कल काग ।

भवराय अतर में मिलने की साध
पिपराई अग्रिया से ढुलती वे नाद ।
दहरी पर जागता सपना का दीप
पगध्वनियाँ सजना की आती समीप ।

पगलाए बना में बीती यह रैन ।
प्रियतम के आवन का पूरब में सैन ।

एम० आई० रोड की एक शाम

स्वप्न खोयी उर्वशी सी मुग्धा
फिल्म की उस नायिका सी भात
जो दिल भूल बैठी हा
फैशन पत्रिका के छपे उस चित्र सी शुभस्माट
जिममे तीखी वासना का रग उभरा हा
पर सुहाती शाम उतरी वहा
जहाँ
मदगामी कारो के पिरामिडो मे
कंद
ग्रहण लगे घाद
पीतल पर चढे सोने के झोल की हँसी हँसते ह
यहाँ लोग मन का नही
शरीर का प्रदर्शन करत है ।
सौंदर्य का नही
वस्त्रो का दर्शन तरते हैं ।
और अखबारी बहस करते हैं
सरकार और पत्नी को गाली देत है
करते हैं पडोसिनो की प्रशंसा

जवाहरलाल की मृत्यु पर

आह ! अब भूचाल आंधी बच गयी पागल पियकरड,
बुझ गया आलोक क्षण म छा गया निमम अंधेरा ।

है कहीं वह रोशनी का मिथु बर्मों का कहेया
मनुजता का मंत्र जो जग का सुनाए ।
मेदिनी का लाल जनता का जवाहर खो गया है।
आसुजा का कोप रीता क्या सुटाए ।

मृत्यु की अनिवायता के सत्य सम्मुख सब मिथ्या,
सत्य बबल है धरा पर शुभ विचारा का सवरा ।

शौच का सिं दूर जैसे पुछ गया है निमित्त भर म
लोकनायक राम फिर स चल बस हैं ।
हो गए जड अश्व, सूरज रथ रुका है रुग्ण हाकर ।
प्रगति-पहिय कीच दल म फिर धँस हैं ।

फूल की खुशबू समय का साप झट चट कर गया है
मुक्ति विधु को आज फिर स राट्टा न दौड घेरा ।

उस अयाचित दान स बलिदान स पर मत्य है यह
लाकतत्री आस्थाएँ कम न हागी ।
उस महामानव बताए शुभ पथ पर कोटि जनता
आदमियत की नयी सूरत सजेगी ।

मानता हूँ दश दिशा म छा गया है घन अंधेरा
पर जवाहर के विचारा का हम करना उजेरा ।

विधवा

कौन तुम बन पतझर की मीत
 देवि ! क्यों बैठी हो चुपचाप !
 नमित दग, सित पग रे मुख पीत,
 पडा किस आसू का अभिशाप !
 म्लान है वृश तन, पौवन मीत,
 सपन मे धुआ, दद औ भाप !
 निठुर आहो का आहन गीत,
 मेघ सी दुलती हो तुम आप !

विरस सासो का पूत समीर,
 शुभे लाता है किन्का ध्यान !
 विहग भावो का अधिक अधीर,
 पख बिन गिर पडता नादान !
 झरे पत्रा सा रगण शरीर
 नयन म थके रूप के वान !
 हृदय म जग जग जाती पीर
 अहे, जगती क सडे विधान !

हाय ! भोले कवि, कोकिल बाल,
 बडा क्या म-व-तर का भार,
 गुनागे मेरी व्यथा विशाल,
 सरल मन पर ला ला कर ज्वार !
 हडिडया का मेरा ककाल,
 कंद प्राणो म प्रेम पुकार,
 प्रश्न में क्रूर जगत की चाल,
 छिन मेरे अ-तर क तार !

अहो, मा ! दो मुझको शुभ शक्ति,
 हूँ मैं तरा हाहाकार
 मात ! तरे चरणो की भक्ति,
 करे सब पीडा का उपचार !
 जगत्त को रूडि घम स मुक्ति
 और माँ ! तुझको पुलकाचार
 द सकू द कर सब अनुरक्ति
 जमर हो तेरे सपन अपार !

अमत-नेवनी घली प्राण म ज्वाला लेकर
 काव्य तुम्हारा शुद्ध युद्ध प्लावन अनुप्रेरक !
 वण भास्वर ओ सतसई म मुनग स्वर भर
 द दिया वीरता या ही ज्या चिरकठ यवायक !
 गौरव गरिमा करने लगी तुम्हारा अचन !

ओ राजस्यानी भापा वे साधक-चातक,
 कौन स्वाति स घूद ग्रहण करके ओ गायक !
 बून्दी की कर गए घम, गत ईर्ष्या लायक !
 हाडौती रज हो क्या तरी भाव निघायक !
 अंध प्ररा पर ज्योति उतारी भर जालिगन !

जब तक जीवित प्रणम धार, तब तब तुम जीवित,
 जब तक पूजित विजय भाव तब तब तुम पूजित,
 जब तब अचित काव्य सुनो तब तक तुम अचित,
 जब तब बन्दित दश प्रम तब तब तुम बन्दित !
 दव दान दो मुझका साहम शील चिरतन !
 ओ वाणी के अमर पुत्र ला मेरा वदन !

□ □



नाम स्व०श्री शम्भूदत्त शर्मा, आत्मज प० रामवृष्ण शर्मा

जन्म 4 जुलाई 1939 बूंदी

शिक्षा एम० ए० (अर्थशास्त्र) साहित्यरत्न, बी० एड० ।

रचना धर्मिता मूलतः कवि हृदय रह कर अपनी अनुभूतियों को गीत-कविता में ढाला। अनुभूतियों की अभिव्यक्ति, पीडा और कवि की कसक चिरंतन वेदना की अनुभूति कराने में समर्थ है।

जनता की आवाज (कोटा), सलवार (चित्तौड़), आजाद (अजमेर), गजराज प्रकाश (अलीगढ़), आदि साप्ताहिकों में मुख्य पृष्ठा पर स्थान पाया।

कहाणियों और कविताओं का सृजन तथा हाडौती के लोकगीतों का सफल भूले विसर गीतों को इस काव्य सफलन के रूप में सहज।

शिक्षण कार्य व्याख्याता अर्थशास्त्र के पद पर जयपुर, काटा एवं बूंदी जिन के उच्च माध्यमिक विद्यालयों में अध्यापन कार्य किया।

देहावसान 18 जून 1975 (अङ्गीत वर्ष की अन्त्या में) ब्रह्म कैंसर के असाध्य रोग से।